इक्कीसवीं सदी के डिजिटल मीडिया युग के संदर्भ में लोक-साहित्य का संरक्षण

डॉ. बृजेश कुमार [1], अजय सुब्बा [2]

[1] सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, नागालैण्ड विश्वविद्यालय, कोहिम परिसर, मेरिमा- 797004

[2] पीएच.डी शोधार्थी, हिंदी विभाग, नागालैण्ड विश्वविद्यालय, कोहिम परिसर, मेरिमा- 797004

शोध सारांश

इक्कीसवीं सदी को डिजिटल क्रांति का युग कहा जा सकता है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने मानव जीवन के लगभग हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। शिक्षा, व्यापार, संस्कृति, राजनीति, समाज और साहित्य कोई भी क्षेत्र इससे अछूता नहीं रहा है। इंटरनेट, सोशल मीडिया, मोबाइल फोन, यूट्यूब, ब्लॉग, पॉडकास्ट और ओटीटी प्लेटफॉर्म ने अभिव्यक्ति के नए माध्यम उपलब्ध कराए हैं। ऐसे परिवेश में यह प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि लोक-साहित्य, जो मूलतः मौखिक परंपरा पर आधारित रहा है, डिजिटल मीडिया के इस तीव्र विस्तार के बीच किस दिशा में अग्रसर है और उसका भविष्य कैसा होगा? लोक-साहित्य किसी एक व्यक्ति की रचना नहीं होता, अपितु वह सामूहिक सामाजिक चेतना की उपज होती है। इसमें लोक-गीत, लोक-कथा, लोकनाट्य, लोक-गाथा, कहावतें, मुहावरे, पहेलियाँ, लोक-विश्वास और लोक-अनुष्ठान शामिल होते हैं। ये सभी लोकजीवन से सीधे जुड़े होते हैं। किंतु आज जब लोकजीवन स्वयं तेजी से बदल रहा है। इस संबंध में धीरेन्द्र प्रताप सिंह अपने शोध आलेख '21 वीं सदी में लोक' में लिखते हैं;- "21 वीं सदी में लोक जीवन कई स्तरों पर बदल चुका है। लोक-जीवन के घटक, मसलन- लोक-संस्कृति, साहित्य, लोक-संगीत आदि में तेजी से बदलाव हुए हैं। जीविका के आधार और प्रवासन की दिशा में भी बदलाव स्पष्ट है। डिजिटल माध्यमों के प्रवेश से लोक-जीवन की रूचियाँ और दिशाएं बदली हैं।" ऐसे गंभीर स्थिति में हमें लोक-साहित्य की स्थिति और भूमिका पर पुनर्विचार आवश्यक हो जाता है।

बीज शब्द: लोक साहित्य, संस्कृति, परंपरा, डिजिटल मीडिया, डिजिटल अभिलेखन, सोशल मीडिया, यूट्यूब, पॉडकास्ट, व्यवसायीकरण, चुनौती, संरक्षण, वैश्वीकरण

मूल आलेख

इक्कीसवीं सदी के दौर में डिजिटल मीडिया ने सामाजिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया है। आज व्यक्ति सूचना एवं मनोरंजन के लिए किसी एक माध्यम पर निर्भर नहीं है।

मोबाइल फोन और इंटरनेट ने सूचना को सुलभ, त्वरित और सर्वव्यापी बना दिया है। परिणामस्वरूप लोगों की जीवन-शैली, सोचने का तरीका और सामाजिक व्यवहार बदल रहा है। ग्रामीण समाज, जो कभी लोक-साहित्य का प्रमुख संरक्षक था, आज तीव्र शहरीकरण की प्रक्रिया से गुजर रहा है। बेहतर रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य और सुविधाओं की तलाश में ग्रामीण जनसंख्या का बड़ा हिस्सा शहरों की ओर पलायन कर रहा है। शहरों में औद्योगिक क्षेत्र, निजी कंपनियाँ, कारखाने, व्यापारिक अवसर और शैक्षणिक संस्थान अधिक हैं, जिससे लोगों को बेहतर वेतन और जीवन-स्तर की आशा रहती है। इसके विपरीत, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के सीमित साधन होने के कारण कृषि पर निर्भरता बनी रहती है।

Published: 31 July 2026
DOI: https://doi.org/10.70558/SPIJSH.2026.v3.i7.45886
Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

इस पलायन का सीधा प्रभाव लोक-संस्कृति और लोक-साहित्य पर पड़ता है। गाँवों में जहाँ पहले सामूहिक जीवन, मेलों, पर्वों और लोकगायन की परंपरा थी, वहाँ अब एक प्रकार का सांस्कृतिक खालीपन उत्पन्न हो रही है। संयुक्त परिवारों का विघटन, सामूहिकता का क्षय और व्यक्तिवाद का उभार लोक-साहित्य की मौखिक परंपरा को कमजोर कर रहा है। इस संबंध में धीरेन्द्र प्रताप सिंह अपने शोध आलेख '21 वीं सदी में लोक' में लिखते हैं;- "आज जब हम एक ऐसे समाज में रहते हैं, जहां सब क्रेता और विक्रेता हैं और सबकुछ बाजार और विज्ञापन से तय हो रहा है, लोक के रंग फीके तो लगते हैं, लेकिन यह एक भ्रम है। लोकजन और मन की जमीन आज भी कोमल और सरल है। उसकी परिधि में मनुष्यता और समुदायिकता का दायरा आज भी काफी बड़ा है। यह जरूर है कि नए समय के प्रभाव से लोक अछूता नहीं है। आज जिसे हम शहरी संस्कृति और विसंगति कहते हैं, उन सबसे लोक भी बुरी तरह प्रभावित है।"[1]

लोक-जीवन एवं लोक-साहित्यः अतीत और वर्तमान

अगर लोक साहित्य की स्थिति पर ध्यान दिया जाए तो स्पष्ट हि कहा जा सकता है कि बीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक लोक साहित्य के संग्रहण, सम्पादन और लिपिबद्धिकरण का व्यापक कार्य संपन्न हुआ है। इस संदर्भ में डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय का नाम लेना कोई आश्चर्य नहीं होगा। उन्होंने लोक साहित्य के लिपिबद्धिकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिए हैं। इसी प्रकार डॉ. श्याम परमार, डॉ. सत्येन्द्र, देवेन्द्र सत्यार्थी, डॉ. महिपाल सिंह राठोड़, श्रीराम शर्मा, डॉ. विजया चंदावत आदि लेखकों ने लोक साहित्य के लिपिबद्धीकरण और विश्लेषणात्मक अध्ययन में उल्लेखनीय योगदान दिया।

इक्कीसवीं सदी के द्वितीय दशक तक आते-आते देश के विभिन्न क्षेत्रों, विशेषकर पूर्वोत्तर भारत में, स्थानीय जनजातीय रचनाकारों ने अपने-अपने समुदायों की मौखिक परंपराओं को लिखित रूप में संरक्षित करने का सराहनीय प्रयास किया। उदाहरणस्वरूप डॉ. जमुना बीनी, डॉ. जोराम यालाम नाबाम तथा पद्मश्री से सम्मानित येशे दोरजी थोंगछी जैसे साहित्यकारों ने अरुणाचल प्रदेश की लोकपरंपराओं को लिपिबद्ध कर उन्हें व्यापक पाठक वर्ग के समक्ष प्रस्तुत किया। इन प्रयासों ने न केवल लोक साहित्य को संरक्षित किया, बल्कि उसे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान भी दिलाई। किन्तु वर्तमान डिजिटल मीडिया युग में लोक साहित्य के समक्ष एक गंभीर प्रश्न उपस्थित है- क्या नई पीढ़ी अपने लोक साहित्य का अध्ययन और आत्मसात कर पाएगी? आज के समय में पाठकीय रुचियाँ तीव्र गति से परिवर्तित हो रही हैं। सूचना-प्रौद्योगिकी के विस्तार और शीघ्र उपलब्धता की संस्कृति ने धैर्यपूर्ण पठन-परंपरा को चुनौती दी है। विशेषतः कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) और डिजिटल प्लेटफॉर्मों के प्रसार ने रचनात्मकता और मौलिक चिंतन के स्वरूप को परिवर्तित कर दिया है। यद्यपि कृत्रिम बुद्धिमत्ता स्वयं में ज्ञान-विस्तार

[1] 21 वीं सदी में लोक, प्रस्तुतिः धीरेंद्र प्रताप सिंह - वागर्थ

का एक साधन है, तथापि इसके अति-निर्भर उपयोग से सृजनात्मक सहभागिता में कमी आने की आशंका भी व्यक्त की जा रही है।

अतः वर्तमान पाठक वर्ग की बदलती रुचियों के अनुरूप लोक साहित्य को किस प्रकार प्रस्तुत किया जाए, जिससे एक ओर लोक संस्कृति का संरक्षण सुनिश्चित हो तथा दूसरी ओर नई पीढ़ी की अभिरुचि भी बनी रहे। इसके लिए आवश्यक है कि लोक साहित्य को डिजिटल माध्यमों- ई-पुस्तक, ऑडियो-विजुअल प्रस्तुति, पॉडकास्ट, एनिमेशन, तथा सोशल मीडिया के माध्यम से नवाचारपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया जाए। साथ ही, अकादमिक पाठ्यक्रमों में क्षेत्रीय लोक साहित्य को समुचित स्थान देकर उसे शैक्षिक विमर्श का हिस्सा बनाया जाए। कहा जा सकता है कि लोक साहित्य का संरक्षण केवल संग्रहण तक सीमित नहीं रहना चाहिए, उसे समयानुकूल प्रस्तुति और नवप्रयोगों के माध्यम से जीवंत बनाए रखना ही इक्कीसवीं सदी की प्रमुख चुनौती और आवश्यकता है।

बीसवीं सदी की तुलना में इक्कीसवीं सदी के लोक-जीवन में व्यापक परिवर्तन देखने को मिलता है। यह परिवर्तन इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक के बाद तेजी से हुआ है। पहले लोक-साहित्य जीवन का सहज अंग था। लोक-गीत खेतों में काम करते समय गाए जाते थे, लोककथाएँ रात में बुजुर्गों द्वारा सुनाई जाती थीं, और लोकनाट्य सामाजिक संदेश का माध्यम होते थे। लोक-साहित्य मनोरंजन के साथ-साथ सामाजिक शिक्षा, नैतिकता और सामूहिक चेतना का संवाहक था, जो एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी तक संचारित होती रहती थी। आज स्थिति बदल चुकी है। डिजिटल मनोरंजन के साधनों जैसे टीवी, मोबाइल, सोशल मीडिया आदि ने लोक-साहित्य के पारंपरिक मंचों को लगभग समाप्त कर दिया है। नई पीढ़ी लोकगीतों की बजाय फिल्मी गीतों और रील्स में अधिक रुचि लेने लगें हैं। लोक-कथाओं का स्थान वेब-सीरीज़ और ऑनलाइन गेम्स ने ले लिया है। इस कारण लोक-साहित्य की मौखिक परंपरा संकट में दिखाई देती है।

लोक साहित्यः वर्तमान और भविष्य

साहित्य को प्रायः समाज का दर्पण कहा गया है, किंतु आज साहित्य के इस स्वरूप में भी परिवर्तन देखने को मिलता है। आधुनिक समय में साहित्य केवल सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब नहीं रह गया है, अपितु वह मनोरंजन और व्यावसायिकता की ओर अधिक उन्मुख हो गया है। लोग अपने व्यक्तिगत हित के लिए साहित्य की रचना कर रहे हैं। हर लेखन के पीछे अपना व्यक्तिगत कारण होता है। एक समय था जब कोई लेखक या रचनाकार अपने समाज को जागृत करने के लिए लिखते थे। समाज की तमाम विषमताओं को समेटकर उसे अपने रचनादृष्टि से दिशा देते थे। यथार्थवादी दृष्टि रहती थी। वे रचनाकार कभी भी अपने समाज की विषमताओं एवं वास्तविकताओं से नहीं भागते थे। क्योंकि रचनाकारों को लगता था कि वे अपने रचनाओं के माध्यम से अपने समाज को शिक्षित करना ही उनका परम कर्तव्य हैं। उन्हे सही दिशा प्रदान करें। उनके भीतर चेतना जागृत करें। इन्हीं निष्ठा के साथ साहित्य की सृजन होती थी। इस संबंध में 'भविष्य का साहित्य' पुस्तक की भूमिका में लिखा है; "पहले हम अतीत को देखते थे और वर्तमान में उसके अनुसार जीते थे। अब हम वर्तमान को देखते हैं और भविष्य के अनुसार जीते हैं। यह एक बहुत बड़ा परिवर्तन है जो सारे सोच को सच जैसी लगने वाली कल्पना में बदल रहा है।"[2] कहने का तात्पर्य पहले मानव समाज अपने पूर्वोजों के अनुभवों, सांस्कृतिक मूल्यों, परंपराओं, एवं ऐतिहासिक चेतना को आधार बनाकर वर्तमान जीवन का संचालन करते थे। यह जीवन शैली, आचार-विचार, नैतिक-मानदंड, सामाजिक संरचनाएं प्रायः परंपरागत मान्यताओं से संचालित होती थी। पहले अतीत केवल स्मृति नहीं होती थी, वह वर्तमान समय के लिए मार्गदर्शक के रूप में काम करता था। लेकिन आज समय के साथ सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तन ने मानव दृष्टिकोण को पूरी तरह से बदल दिया है। आज मनुष्य वर्तमान परिस्थितियों का अवलोकन करते हुए भविष्य की

[2] मिश्र, राजेन्द्र. भविष्य का साहित्य (21वीं सदी के साहित्य की अवधारणा). तक्षशिला प्रकाशन. नई दिल्ली. 2011. पृ. सं.-6

संभावनाओं और चुनौतियों के अनुसार अपने जीवन को जीने तथा बेहतर निर्माण करने का प्रयास करते हैं। वर्तमान जीवन में प्रतिस्पर्धा, प्रगति एवं लक्ष्य केंद्रित ने मानव जीवन की भविष्य के प्रति चिंता और योजना-निर्माण को अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है। इसका परिणाम यह हुआ कि आज हम अतीत की अपेक्षा बेहतर भविष्य की तैयारी पर ज्यादा ध्यान देने लगे हैं।

इसी परिवर्तनशील सामाजिक दृष्टिकोण का प्रभाव पाठक-वर्ग की रुचियों पर भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। जहाँ पूर्व समय में पाठक परंपरा, इतिहास और सांस्कृतिक विरासत से संबंधित साहित्य में विशेष रुचि लेते थे, वहीं आज उनकी अभिरुचि अधिकतर समकालीन, त्वरित और उपयोगितावादी विषयों की ओर उन्मुख होती दिखाई देती है। आधुनिक जीवन की तीव्र गति, प्रतिस्पर्धात्मक परिवेश और भविष्य-केंद्रित मानसिकता ने साहित्यिक रुचियों को भी प्रभावित किया है। परिणामस्वरूप, गहन अध्ययन और परंपरागत साहित्य के प्रति धैर्यपूर्ण आसक्ति में कमी आई है तथा तात्कालिक आकर्षण और लोकप्रियता को अधिक महत्त्व मिलने लगा है।

इसके साथ ही, प्रकाशन-जगत भी इस व्यावसायिक प्रवृत्ति से अछूता नहीं रहा है। वर्तमान समय में प्रकाशक-वर्ग प्रायः आर्थिक लाभ को प्राथमिकता देने लगा है। बाज़ार की माँग और तेजी से बिक्री की संभावना को ध्यान में रखते हुए अनेक पुस्तकें पर्याप्त संपादकीय परीक्षण और अकादमिक समीक्षा के बिना ही शीघ्रता से प्रकाशित की जा रही हैं। इस प्रवृत्ति के कारण साहित्य की गुणवत्ता, प्रमाणिकता और बौद्धिक गंभीरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका उत्पन्न होती है। अतः यह कहा जा सकता है कि पाठकीय रुचियों में परिवर्तन तथा प्रकाशन क्षेत्र की बढ़ती व्यावसायिकता ने साहित्यिक संसार को नई दिशा तो दी है, किन्तु इसके साथ ही गुणवत्ता और मूल्य-आधारित दृष्टिकोण के समक्ष एक गंभीर चुनौती भी उपस्थित कर दी है। प्रकाशन उद्योग, सोशल मीडिया लोकप्रियता और बाज़ार की माँगें साहित्य की दिशा तय करने लगी हैं। आज का साहित्य कई बार व्यक्तिगत लाभ, प्रसिद्धि और आर्थिक सफलता से प्रेरित दिखाई देता है। यह स्थिति लोक-साहित्य के लिए और भी चुनौतीपूर्ण हो जाती है, क्योंकि लोक-साहित्य मूलतः लाभ या व्यक्तिगत प्रसिद्धि के लिए नहीं, अपितु सामूहिक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए रचा जाता है।

लोक-साहित्यः संभावनाएँ और चुनौतियाँ

वर्तमान डिजिटल युग में लोक साहित्य के संरक्षण के समक्ष अनेक गंभीर चुनौतियाँ उपस्थित हो रही हैं। सर्वप्रथम, लोक साहित्य की मूल सामग्री का अभाव एक प्रमुख समस्या के रूप में उभरकर सामने आता है। चूँकि लोक साहित्य की परंपरा मुख्यतः मौखिक रही है, अतः इसका पर्याप्त और व्यवस्थित लिखित रूप उपलब्ध नहीं है। जो सामग्री प्राप्त होती है, वह अत्यंत सीमित, आंशिक अथवा क्षेत्र-विशेष तक सीमित होती है। इस कारण शोधकर्ताओं एवं अध्येताओं को उपलब्ध अल्प सामग्री को ही आधार बनाकर आगे बढ़ना पड़ता है। परिणामस्वरूप, अनेक बार यह आशंका बनी रहती है कि प्रस्तुत सामग्री लोक परंपरा का संपूर्ण और प्रामाणिक प्रतिनिधित्व नहीं करती। इस प्रकार सामग्री की अपर्याप्तता और विविध संस्करणों के अभाव के कारण लोक साहित्य के अध्ययन में प्रामाणिकता का संकट उत्पन्न हो जाता है।

दूसरी बात, डिजिटल माध्यमों पर उपलब्ध लोक साहित्य की विश्वसनीयता भी एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। वर्तमान समय में सोशल मीडिया मंचों पर लोकगीतों, लोककथाओं और अन्य लोक-रचनाओं के परिवर्तित, संक्षिप्त या आधुनिक रूप व्यापक स्तर से प्रसारित किए जा रहे हैं। इन प्रस्तुतियों में प्रायः मूल संदर्भ, रचनात्मक परिवेश और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का समुचित उल्लेख नहीं किया जाता। कई बार व्यावसायिकता या लोकप्रियता की दृष्टि से मूल स्वरूप में परिवर्तन भी कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में यह निर्धारित करना कठिन हो जाता है कि कौन सा रूप वास्तविक

परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है और कौन सा संशोधित या रूपांतरित संस्करण है। इससे लोक साहित्य के प्रति प्रामाणिकता और तथ्यात्मकता का अभाव दृष्टिगोचर होता है।

तीसरी बात, पीढ़ियों के मध्य संवाद में आई कमी भी लोक साहित्य के संरक्षण में बाधक सिद्ध हो रही है। परंपरागत रूप से लोक साहित्य का संप्रेषण परिवार और समुदाय के भीतर बुजुर्गों द्वारा बच्चों और युवाओं को सुनने-सुनाने की प्रक्रिया से होता था। किंतु वर्तमान व्यस्त जीवनशैली, संयुक्त परिवारों के विघटन और समयाभाव के कारण यह परंपरा क्षीण होती जा रही है। आज अधिकांश लोगों के पास इतना अवकाश नहीं है कि वे अपने बच्चों के साथ बैठकर लोककथाएँ, लोकगीत या पारंपरिक अनुभव साझा कर सकें। परिणामस्वरूप, मौखिक परंपरा का स्वाभाविक हस्तांतरण बाधित हो रहा है।

इसके अतिरिक्त, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों और डिजिटल मनोरंजन के प्रसार ने भी पारिवारिक एवं सामुदायिक संवाद को सीमित कर दिया है। आज बुजुर्ग वर्ग और युवा पीढ़ी दोनों ही स्मार्टफोन, इंटरनेट और विविध डिजिटल मंचों में व्यस्त रहते हैं। सोशल मीडिया, ऑनलाइन वीडियो और त्वरित मनोरंजन के असंख्य साधनों ने लोक परंपराओं के प्रति स्वाभाविक रुचि को कम कर दिया है। जहाँ लोक साहित्य धैर्य, सामूहिक सहभागिता और संवेदनात्मक अनुभव की अपेक्षा करता है, वहीं डिजिटल मनोरंजन त्वरित और दृश्य-प्रधान है। इस प्रवृत्ति ने लोक साहित्य के प्रति उदासीनता को बढ़ावा दिया है। अंततः लोक साहित्य के वैज्ञानिक एवं प्रामाणिक डिजिटलीकरण की प्रक्रिया स्वयं भी अनेक तकनीकी और संरचनात्मक चुनौतियों से घिरी हुई है। क्षेत्रीय भाषाओं के लिप्यंतरण, ध्वनि और वीडियो अभिलेखन की गुणवत्ता, स्रोत-सत्यापन तथा दीर्घकालिक डिजिटल संरक्षण जैसी समस्याएँ अभी भी पूर्णतः समाधान की प्रतीक्षा में हैं। यदि बिना पर्याप्त अनुसंधान और प्रमाणिकता की जाँच के सामग्री को डिजिटल रूप दिया जाता है, तो भविष्य में वह भ्रामक या अपूर्ण सिद्ध हो सकती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि डिजिटल युग में लोक साहित्य का संरक्षण केवल तकनीकी प्रक्रिया के साथ-साथ एक सांस्कृतिक और बौद्धिक दायित्व भी है। सामग्री की कमी, प्रामाणिकता का संकट, पीढ़ियों के मध्य संवादहीनता तथा डिजिटल व्यस्तता जैसी चुनौतियाँ इसके समक्ष गंभीर अवरोध के रूप में विद्यमान हैं। अतः आवश्यक है कि लोक साहित्य के संरक्षण हेतु व्यवस्थित शोध, प्रामाणिक अभिलेखीकरण और सामाजिक जागरूकता को समान रूप से महत्व दिया जाए, जिससे हमारी सांस्कृतिक विरासत का समुचित और तथ्याधारित संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके।

लोक-साहित्य और नई पीढ़ी

डिजिटल मीडिया को केवल लोक-साहित्य के लिए खतरे के रूप में देखना एकांगी दृष्टि होगी। डिजिटल युग की सबसे बड़ी चुनौती यह है कि नई पीढ़ी को लोक-साहित्य से कैसे जोड़ा जाए। आज की युवा पीढ़ी दृश्य और त्वरित (शीघ्र) सामग्री की ओर अधिक आकर्षित होती है। ऐसे में लोक-साहित्य को उसी रूप में प्रस्तुत करने की आवश्यकता है, जो नई पीढ़ी को रुचिकर लगे। एनिमेशन, शॉर्ट वीडियो, ग्राफिक स्टोरीटेलिंग और इंटरएक्टिव मीडिया के माध्यम से लोककथाओं और लोकगाथाओं को नए रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। इससे लोक-साहित्य जीवंत बना रहने के साथ-साथ उसकी मूल संवेदना भी सुरक्षित रह सकेगी। वास्तव में डिजिटल माध्यम लोक-साहित्य के संरक्षण और प्रसार के लिए नई संभावनाएँ भी प्रस्तुत करते हैं। आज लोकगीतों, लोककथाओं और लोकनाट्यों को ऑडियो-वीडियो के रूप में रिकॉर्ड कर डिजिटल प्लेटफॉर्म पर संरक्षित किया जा सकता है और किया जा रहा है। यूट्यूब, फेसबुक, इंस्टाग्राम और पॉडकास्ट जैसे माध्यमों ने लोककलाकारों को वैश्विक मंच प्रदान किया है। जो लोक-साहित्य पहले केवल किसी क्षेत्र विशेष तक सीमित था, वह अब विश्व स्तर पर सुना और समझा जा सकता है। इसके प्रत्यक्ष उदाहरण के रूप में हम कल्पना पटवारी को ले सकते हैं। कल्पना पटवारी जो असम में रहने वाली लोक

गायिका हैं। उन्हें लोक-गीतों के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने वर्तमान समय में डिजिटल मीडिया के मंच के माध्यम से भिखारी ठाकुर जैसे भोजपुरी साहित्य के महान नाट्यकार एवं संगीतकार के गीतों को नई दिशा प्रदान की हैं।

आज यूट्यूब जैसे डिजिटल मंचों पर विभिन्न क्षेत्रों के कलाकारों, शोधकर्ताओं और सांस्कृतिक कर्मियों द्वारा लोकगीत, लोककथाएँ तथा लोकनृत्य का वीडियो-दस्तावेजीकरण किया जा रहा है। इस प्रक्रिया ने मौखिक परंपराओं को दृश्य-श्रव्य स्वरूप में संरक्षित कर उन्हें व्यापक दर्शक-समुदाय तक पहुँचाने का मार्ग भी प्रशस्त किया है। विशेष रूप से उल्लेखनीय तथ्य यह है कि नई तकनीकों के प्रयोग से अनेक लोककथाओं और लोक-आख्यानों को फिल्मी शैली या नाट्य-रूपांतरण के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है, जिससे उनकी प्रस्तुति अधिक आकर्षक, प्रभावी और समकालीन दर्शकों के अनुकूल बन सकी है। फलस्वरूप, समाज में लोक साहित्य के प्रति जिज्ञासा और उत्सुकता बनी रहती है, तथा लोगों को अपनी सांस्कृतिक परंपराओं और लोकविश्वासों को समझने का अवसर प्राप्त होता है। साथ ही, डिजिटल मंचों के कारण इन लोकाभिव्यक्तियों का प्रसार देश-विदेश तक सहजता से संभव हो पाया है।

यूट्यूब पॉडकास्ट तथा अन्य डिजिटल संवाद-माध्यमों ने भी लोक साहित्य के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उदाहरणार्थ, प्रसिद्ध भोजपुरी लोकगायिका कल्पना पटवारी विभिन्न डिजिटल साक्षात्कारों और संवाद-कार्यक्रमों के माध्यम से भोजपुरी लोक परंपरा को लोकप्रिय बनाने का कार्य कर रही हैं।

उन्होंने अपने वक्तव्यों में भोजपुरी के महान लोकनाट्यकार भिखारी ठाकुर के लोकगीतों, लोकनाट्यों और उनके सांस्कृतिक महत्व को रेखांकित किया हैं, जिससे नई पीढ़ी को लोक साहित्य की ऐतिहासिक एवं सामाजिक प्रासंगिकता से परिचित होने का अवसर मिलता है। उन्होंने अपने यूट्यूब चनेल @kalpanaArtist के माध्यम से भिखारी ठाकुर के लोक नाटकों के कई गीतों को प्रस्तुत किया है।

इसके अलावा उन्होंने कई पूर्वी लोक गीतों को यूट्यूब के माध्यम से दस्तावेजीकरण कर एक अनूठा योगदान दी हैं। इसी क्रम में 'द् लीगेसी ऑफ भिखारी ठाकुर' यह एक वृहत लोक-गीत संकलन है, जिसमे लोक नाट्य परंपरा के अप्रतिम जनक भिखारी ठाकुर की नौ गीतों को संग्रहीत किया गया है। हालांकि इन गीतों को कल्पना पटवारी ने वाद्य- संगीत का प्रयोग करते हुए मूल लोक स्वर और कथ्य की आत्मा को सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है।

इसी प्रकार डॉ. जमुना बीनी, जो अरुणाचल प्रदेश की एक सक्रिय लेखिका एवं कवयित्री हैं, अपने यूट्यूब चैनल folktales of Arunachal Pradesh by Jamuna Bini (episode wise) और फेस्बूक पृष्ठ (Facebook page) के माध्यम से तानी समुदाय की लोककथाओं को कहानी-कथन (storytelling) की शैली में प्रस्तुत कर उन्हें पुनर्जीवित करने का प्रयास कर रही हैं। उनकी यह पहल डिजिटल माध्यमों द्वारा मौखिक परंपराओं के संरक्षण

का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। इस प्रक्रिया में पुरवोत्तर भारत की स्थानीय जनजातियों की लोककथाओं का कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) के माध्यम से यूट्यूब पर तीव्र गति से डिजिटलीकरण किया जा रहा है, जो सांस्कृतिक संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण पहल है। नागा जनजातियों की लोककथाएँ 'Hilly Tales', मिज़ो जनजातियों की लोक कथाएँ 'Pc Hras' Mizo Folktales जैसे यूट्यूब चैनलों के माध्यम से व्यापक रूप से उपलब्ध कराई जा रही हैं। इस प्रकार, वर्तमान समय में विभिन्न स्थानीय लोककथाओं के संरक्षण हेतु निरंतर नए-नए यूट्यूब चैनलों का निर्माण और विस्तार हो रहा है। यह प्रक्रिया न केवल पारंपरिक मौखिक परंपराओं के लुप्त होने के खतरे को कम करती है, वरण उन्हें डिजिटल रूप में संरक्षित कर नयी पीढ़ियों के लिए सुलभ भी बनाती है। साथ ही, यह नए पीढ़ी के लिए इन कथाओं को अधिक रुचिकर बनाती है, जिससे वे आसानी से उनसे जुड़ पाते हैं और अपने लोकविश्वास, सांस्कृतिक विरासत तथा सामाजिक मूल्यों को समझने का एक प्रभावी माध्यम प्राप्त करते हैं। इस प्रकार सांस्कृतिक निरंतरता और सामुदायिक पहचान के संरक्षण को सुदृढ़ आधार मिलता है।

वैश्विक स्तर पर भी लोक साहित्य एवं संस्कृति के संरक्षण व डिजिटलीकरण के कई प्रयास देखी जा सकती है। वैश्वीकरण और तीव्र तकनीकी विकास के इस दौर में लोक साहित्य एवं लोक संस्कृति के समक्ष संरक्षण का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण बन गया है। सदियों से मौखिक परंपराओं के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी संचित लोकज्ञान, लोककथाएँ, लोकगीत और सांस्कृतिक अनुभव आज विस्मृति के संकट का सामना कर रहे हैं। आधुनिक उपभोक्तावादी जीवनशैली, नगरीकरण तथा वैश्विक सांस्कृतिक प्रभावों के कारण स्थानीय समुदायों की पारंपरिक अभिव्यक्तियाँ धीरे-धीरे हाशिए पर चली जा रही हैं। विशेष रूप से युवा पीढ़ी का डिजिटल और बाह्य सांस्कृतिक प्रभावों की ओर अधिक आकर्षित होना लोक परंपराओं की निरंतरता के लिए चुनौती उत्पन्न कर रहा है।

इसी संदर्भ में विश्व के विभिन्न देशों में लोक साहित्य और स्वदेशी सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण हेतु अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। मलेशिया इसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करता है, जहाँ विशेषकर सबाह (Sabah) और सारावाक (Sarawak) क्षेत्रों के स्वदेशी समुदायों की मौखिक परंपराओं को संरक्षित करने के उद्देश्य से डिजिटल पहलें आरंभ की गई हैं। 'तुयांग इनिश्यटिव' तथा 'बुनडुसान बुक्स (Bundusan Books) जैसी परियोजनाएँ स्थानीय लोककथाओं, मिथकों, सांस्कृतिक अनुभवों और पारंपरिक ज्ञान को संग्रहित कर उन्हें डिजिटल माध्यमों द्वारा व्यापक समाज तक पहुँचाने का कार्य कर रही हैं।

इसी प्रकार 'दायक लॉर' (Dayak Lore) सारावाक के दयाक समुदायों की लोक परंपराओं और सांस्कृतिक स्मृतियों का महत्वपूर्ण डिजिटल संकलन है। यह केवल लोककथाओं का संग्रह के साथ-साथ स्वदेशी समुदायों की सांस्कृतिक पहचान, जीवन-दृष्टि तथा पारंपरिक ज्ञान प्रणाली को संरक्षित करने का एक सशक्त माध्यम भी है। डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से इन सामग्रियों को वैश्विक स्तर पर उपलब्ध कराना इस बात का संकेत है कि आधुनिक तकनीक केवल पारंपरिक संस्कृति के लिए संकट ही नहीं, उसके संरक्षण और पुनर्प्रस्तुतीकरण का प्रभावी साधन भी बन रहा है।

इसी संरक्षणात्मक प्रयासों की श्रृंखला में मलेशिया में निनॉट अज़ीज़ ने वर्ष 2020 में डिजिटल माध्यमों द्वारा लोककथाओं के पुनर्प्रस्तुतीकरण और प्रसार की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उन्होंने ऑनलाइन कहानी-वाचन (Digital storytelling) तथा लोककथाओं के साझा मंचों के माध्यम से स्थानीय समुदायों की पारंपरिक कथाओं को नई पीढ़ी तक पहुँचाने का प्रयास किया। यह पहल केवल मनोरंजन तक सीमित न होकर, सांस्कृतिक स्मृति, स्थानीय इतिहास और सामुदायिक पहचान के संरक्षण का एक सशक्त माध्यम भी बनी। विशेष रूप से डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग कर लोककथाओं को प्रस्तुत करना इस बात को दर्शाता है कि आधुनिक तकनीक और पारंपरिक संस्कृति के बीच समन्वय स्थापित किया जा सकता है। जहाँ एक ओर वैश्वीकरण और आधुनिक जीवनशैली

के प्रभाव से मौखिक परंपराएँ लुप्त होने की स्थिति में पहुँच रही हैं, वहीं दूसरी ओर डिजिटल माध्यम इन परंपराओं को संरक्षित कर वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाने का कार्य कर रहे हैं।

निनॉट अज़ीज़ की यह पहल इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि इससे लोककथाएँ केवल स्थानीय समुदायों तक सीमित नहीं रहीं है। यह इंटरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी पहुँचने लगीं। इससे यह स्पष्ट होता है कि डिजिटल कथावाचन (Digital Storytelling) आज लोक साहित्य और लोक संस्कृति के संरक्षण, पुनर्जीवन तथा प्रसार का प्रभावी साधन बनता जा रहा है।

इस तरह यह स्पष्ट है कि जहाँ एक ओर डिजिटल युग लोक साहित्य के समक्ष चुनौतियाँ उपस्थित करता है, वहीं दूसरी ओर वही युग उसके संरक्षण, पुनर्प्रस्तुतीकरण और वैश्विक प्रसार के लिए अभूतपूर्व संभावनाएँ भी उपलब्ध कराता है। वर्तमान समय में डिजिटल माध्यमों के द्वारा लोक साहित्य को संरक्षित, प्रलेखित और लोकप्रिय बनाने के विविध प्रयास निरंतर किए जा रहे हैं, जो सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण की दिशा में एक सकारात्मक और आशाजनक पहल के रूप में देखे जा सकते हैं। इसके आलावे डिजिटल अभिलेखीकरण (Digital Archiving) लोक-साहित्य के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों और सांस्कृतिक संगठनों द्वारा लोक-साहित्य के डिजिटल संग्रह तैयार किए जा रहे हैं, जिससे लुप्तप्राय लोक-विधाओं को बचाया जा सकता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि डिजिटल मीडिया युग में लोक-साहित्य का भविष्य पूरी तरह संकटग्रस्त नहीं है, वह परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। यदि इस परिवर्तन को सकारात्मक दिशा दी जाए, तो डिजिटल माध्यम लोक-साहित्य के लिए वरदान सिद्ध हो सकते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हम लोक-साहित्य की आत्मा को समझें और आधुनिक तकनीक के साथ उसका संतुलित समन्वय स्थापित करें। तभी लोक-साहित्य न केवल जीवित रहेगा, वरण आने वाली पीढ़ियों के लिए सांस्कृतिक चेतना का सशक्त स्रोत बन सकेगा।

ग्रंथ सूची:

1. एलेन. पीज बारबरा. दीक्षित, सुधीर (अनु). इक्कीसवीं सदी का लोक व्यवहार. मंजुल प्रकाशन. 2015
2. मिश्र, राजेन्द्र. भविष्य का साहित्य (21 वीं सदी के साहित्य की अवधारणा). तक्षशिला प्रकाशन: नई दिल्ली. 2011
3. हरारी, युवाल नोआ. 21वीं सदी के लिए 21 सबक. मंजुल प्रकाशन. 2022
4. हर्षबाला, शर्मा. (संपा.) इक्कीसवीं सदी औपनिवेशिक मानसिकता और भाषा. अंतिका प्रकाशन. उ. प्र. गलियाबाद. 2011
5. शाद, शरीना, प्रिला लुकिस वेडियंतोरो, और आलिया नबेला फतेहा जोल्किफली. "कल्चरल प्रिजर्वेशन इन द डिजिटल एज: द फ्यूचर ऑफ इंडिजिनस फोकटेल एंड लेजेंड्स." IJRISS, खंड VIII, अंक IX, 2024, पृष्ठ 2835+.
6. डॉ. अरुणा. “लोकगीतों पर फिल्म एवं मीडिया का प्रभाव”. IJSDR, खंड- 8 अंक- 6, 2023. पृ. सं. 1294-97
7. IJRISS. Cultural Preservation in the Digital Age: The Future of indigenous Folktales and Legends. Oct. 2024